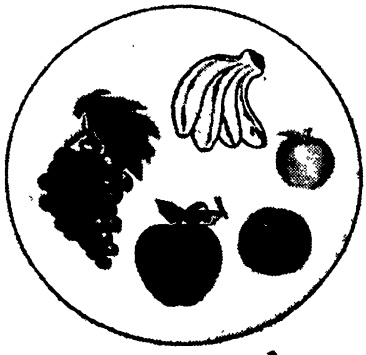

कहां गए वो आम?

उषा मेनन

पहली नज़र में आपको भा जाने वाली पाठ्यपुस्तक को जब एक शिक्षा शास्त्री के नज़रिए से देखते हैं तो निष्कर्ष कुछ और ही सामने आते हैं। पिछले साल एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा प्रकाशित पहली कक्षा की गणित की पाठ्यपुस्तक के एक विशेष पहलू की समीक्षा।

एन.सी.ई.आर.टी. की पहली कक्षा की गणित की नई पाठ्यपुस्तक साज-सज्जा की दृष्टि से एक सुन्दर पुस्तक है।[1] अनेक बहुरंगी एवं स्पष्ट चित्रों की वजह से पुस्तक काफी आकर्षक बन गई है और मेरा विश्वास है कि बच्चे इस पुस्तक को पाकर बहुत खुश होंगे। अधिकांश अभिभावक और शिक्षक भी इस बात से काफी प्रसन्न होंगे कि अंततः एन.सी.ई.आर.टी. ने बच्चों की विशेष ज़रूरतों को समझा और पहले की नीरस पुस्तक को इस सुंदर पुस्तक से बदल दिया है।

लेकिन पुस्तक को ध्यान से देखने पर कुछ कमियां नज़र आने लगती हैं, जो और बारीकी से देखने पर बढ़ती जाती हैं। चलिए, शुरुआत एक सवाल से करते हैं – आखिर बच्चों की किसी पुस्तक में चित्रों की क्या

भूमिका है? निश्चित रूप से यह जो भी हो, इसे विज्ञापन से तो फर्क होना ही चाहिए। और यहां हम बच्चों की किसी साधारण पुस्तक की नहीं बल्कि पहली बार स्कूल जाने वाले बच्चे की पहली पुस्तक की बात कर रहे हैं। जिस किसी ने भी पहली कक्षा के बच्चों के अपने बस्ते और किताबों के साथ घनिष्ठ लगाव को ध्यान से देखा है, वह पहली पुस्तक का महत्व समझ सकता है। बच्चे इन्हें अत्यन्त मूल्यवान धरोहर की तरह संजोकर रखते हैं और उनके मनमस्तिष्क पर इसकी चिरस्थाई छाप बनी रहती है। यहां मैं बच्चों की उस बड़ी संख्या की बात कर रही हूं जिनके लिए पहली कक्षा की पुस्तकें ही उनकी पहली पुस्तकें होती हैं। इसलिए यह प्रश्न उठता है कि ऐसी किसी पुस्तक में दिए गए चित्र कैसे होने चाहिए और उनकी भूमिका क्या होनी चाहिए?

बच्चों के लिए किताब के मायने

पहली पुस्तक में दिए गए चित्र और शब्द बच्चों के लिए अर्थ का एक नया संसार खोलते हैं। उनके लिए शब्दों के अर्थ परिस्थितियों के समरूप होते हैं – भाव तथा क्रिया से भरे हुए। फिर वे शब्दों में ढलते हैं और शब्दों से ध्वनियों में। फिर चित्रों और लिखे हुए शब्दों का एक दूसरा माध्यम प्रकट होता है। और इन सबके द्वारा बच्चा अनुभव किए जा सकने योग्य चीज़ों को व्यक्त करने के दूसरे तरीकों को सीखता है। ऐसे भी कहा जा सकता है कि एक पांच वर्षीय बालक एक किस्म से 'संकेतों की दुनिया' में रहता है। नए-नए अभिप्राय, अपने विभिन्न रूपों में अर्थ और उनके विभिन्न संयोजनों की रचना को अतिरिक्त आयाम देते हैं। किन्तु इन सब के पीछे अनुभवजन्य यथार्थ का परिपोषक आधार होता है। इस यथार्थ को न केवल अनुभव कर सकते हैं बल्कि इसका पालन भी किया जा सकता है। यदि इस यथार्थ को कागज़ पर व्यक्त करना साक्षर होने का महत्वपूर्ण अंग है तो इन चित्रों को भी उसी मानदंड पर आंका जाना चाहिए, न कि किसी विज्ञापन के मानक पर।[2] संभवतः एन.सी.ई.आर.टी. की पुस्तक को देखने पर होने वाली परेशानी उस विशाल खाई के कारण होती है जो किसी भी औसत भारतीय बालक ही नहीं, हिन्दुस्तान के प्रत्येक बच्चे के अनुभवजन्य ज्ञान और इस पुस्तक के चित्रों के बीच उपस्थित है।

पुस्तक पर एक सरसरी दृष्टि डालने से ही यह समझ में आने लगता है कि चित्र किसी अमेरिकी चित्रकथा या पाठ्यपुस्तक से लिए गए हैं, यद्यपि इसके लिए कहीं कोई आभार व्यक्त नहीं किया गया है। विदेशी चित्रों पर निर्भरता किसी एक छोटे-से अंश तक सीमित नहीं बल्कि सर्वव्यापक है।

तालिका 1 विभिन्न फलों के चित्रों की पृष्ठ संख्या

सेब	अंगूर	केला	नाशपाती	आड़ू	संतरा	पहाड़ी बादाम	चेरी	अनानास
9	23	32	35	27	53	22	99	147
10	24	39	53	36	147			
31	47	53	147					
53	81	54						
96	147	99						
147								

पूरी किताब में हरेक पृष्ठ पर कौन-कौन से फलों के चित्र बने हैं उनकी पड़ताल करने के बाद, यहां हरेक फल के चित्र किन-किन पृष्ठों पर हैं यह दिखाया गया है। उदाहरण के लिए नाशपाती वाले स्तंभ में लिखे 35, 53 और 147 वे पृष्ठ क्रमांक हैं जिन पर नाशपाती के चित्र बने हैं।

किताब में पाए जाने वाले देवदूत जैसे गुलाबी चेहरे वाले बाल-चरित्र से लेकर फ्लिंट स्टोन्स कॉमिक के चरित्र, या पशु, या गुड़िया, या घर-गृहस्थी का सामान – स्पष्टतः सभी किसी दूसरी संस्कृति के सामाजिक परिवेश का भाग लगते हैं।

दूसरी संस्कृति परहेज़ नहीं लेकिन

किसी दूसरी संस्कृति की बातें जानने में कोई हानि नहीं है जबकि हम यह जानते हैं कि हम सब पृथ्वी पर एक साथ रहते हैं और एक-दूसरे से सीखते हैं। किन्तु क्या हमारी अपनी संस्कृति और अपने परिवेश में स्थित चीज़ों को हटाकर ऐसा करना उचित होगा? और वह भी किस उम्र में? किस उद्देश्य से? वास्तव में हमारे अपने पर्यावरण से संगति रखने वाला एक भी चित्र इस पुस्तक में ढूंढे नहीं मिलता। किताब के पृष्ठ आठ पर एक स्त्री का चित्र अपवाद हो सकता है पर वह भी ऐसा दिखता है जैसे उसे किसी तकनीकी विधि से साड़ी पहना दी गई हो।

एन.सी.ई.आर.टी. की इस नई पाठ्यपुस्तक का सबसे बड़ा दोष यह है कि पूरी पुस्तक में कहीं पर भी आम का चित्र नहीं दिया गया है। जितना मुझे याद है हमारे पुस्तक लेखक हमेशा से ही चित्रों के ज़रिए जोड़-घटाव आदि सिखाने के लिए आम के चित्रों का इस्तेमाल करते आए हैं।

भारतीय परिवेश का एक चित्र जिसमें साड़ी तकनीकी कमाल के चलते पहनाई हुई प्रतीत होती है।

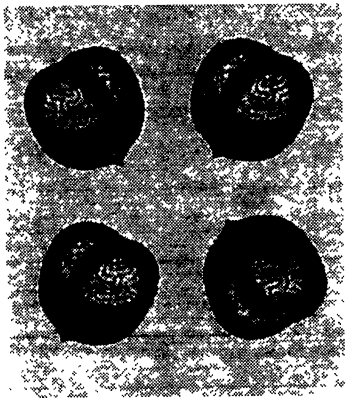

पहाड़ी बादाम एक बार फिर सोचने पर मजबूर करता है कि यह किस जगह का फल है?

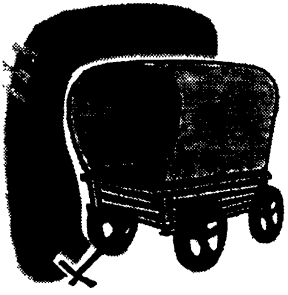

यह चार पहियों वाली गाड़ी न हमारे यहां की बैलगाड़ी नज़र आती है, न तांगा – क्योंकि यह सैंकड़ों साल पहले अमरीकी पुरोधाओं द्वारा इस्तेमाल की जाने वाली बग्घी का चित्र है।

गणित के सवालों में इस्तेमाल की गई ये हट्टी-कट्टी, लंबे कानों वाली गिलहरियां भी उत्तरी अमरीका से चुराई गई हैं।

एन.सी.ई.आर.टी. के पूर्व संस्करण में इतने अधिक चित्र नहीं थे पर उनमें भी आम के चित्र अवश्य मौजूद थे। उनमें अंक सात को प्रदर्शित करने के लिए सात पके-अधपके सुस्वादु आमों का चित्र बना हुआ था। परन्तु इस नए संस्करण में जहां छह जगह चित्रों में सेब व अन्य 19 चित्रों में विविध फल दिखते हैं, आम का एक भी चित्र नहीं है। कोई यह तर्क भी दे सकता है कि सेब अब पहले की तुलना में अधिक उपलब्ध हैं, लेकिन फिर भी क्या हमारे अच्छे प्यारे आमों के लिए थोड़ी-सी जगह भी नहीं होनी चाहिए?[3] भारत के ज़्यादतर हिस्सों में बच्चों के लिए आम अभी भी एक जाना-पहचाना फल है। यहां हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि भारत के अन्य पाठ्यपुस्तक लेखकों के लिए एन.सी.ई.आर.टी. की पुस्तकें प्रतिमान का काम करती हैं।

मामला सिर्फ आम का नहीं

प्रश्न आम के होने, न होने या पुस्तक में शीघ्र ही आम का कोई चित्र चिपका देने का नहीं है। इस पुस्तक के चित्र शिक्षा के प्रति एक विशेष तरह का झुकाव दर्शाते हैं और पुस्तक निर्माण कार्य को गंभीरता से नहीं लिए जाने की ओर इंगित करते हैं। समस्या आमों को नाशपातियों से बदल देने की नहीं बल्कि किस तरह के चित्र इस्तेमाल किए जा रहे हैं इसकी तरफ ध्यान नहीं देने और स्थानीय सामग्री को पूर्णतः नकार देने की है। यहां तक कि अधिकांश शिक्षक भी पृष्ठ 22 पर दिए गए पहाड़ी बादाम के चित्र को पहचान नहीं पाएंगे। केले और अंगूर के चित्रों को देखने पर भी यह शंका होने लगती है कि उन्हें भी शायद इसलिए नहीं चुना गया कि भारतीय बच्चे उन्हें जानते हैं बल्कि इसलिए कि वे अमेरिका में 'बनाना रिपब्लिक' से आयातित किए जाते हैं या कैलिफोर्निया में उगाए जाते हैं और अमेरिकी बच्चों की किताबों में पाए जाते हैं।

इसी तरह किताब में सांवले चेहरे केवल वहीं दिखते हैं जहां अफ्रीका वासियों को चित्रित किया गया है – वो भी इस तरह जैसे कि पिछली पीढ़ी की अमेरिकी किताबों में उन्हें कार्टून के रूप में दर्शाया जाता था।

चित्रों का अपरिचित स्रोत केवल फलों व सब्ज़ियों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि हर चित्र पर इसकी छाया झलकती है। बच्चों की इस पहली किताब में सुपरिचित चीज़ें भी अलग-सी दिखती हैं। इसी कारण पृष्ठ 21 व 31 में दर्शाई गई बैलगाड़ी या तांगा भी जाने-पहचाने नहीं लगते। लेकिन अमेरिकी इतिहास से परिचित व्यक्ति अमेरिकी पुरोधाओं की इस बग्घी/गाड़ी को आसानी से पहचान सकता है। पृष्ठ 23 पर बनाई गई उत्तरी

बच्चों से पांच का अंक लिखवाना है। लेकिन 5 एकदम ही अमूर्त न लगे इसलिए पांच मानवीय आकृतियां बनी हुई हैं। यह बात अलग है कि ये मानवीय आकृतियां बच्चों के परिवेश से बिल्कुल भी संबंधित नहीं हैं।

अमेरिका की लंबे झब्बा कानों वाली गिलहरी और हमारी परिचित छोटी गिलहरी में साम्य नहीं देख पाने के लिए हम बच्चों को दोषी नहीं ठहरा सकते। ऐसा ही कुछ सुअरबाड़े में बंधे सफेद सुअर, या गुड़िया, या ऐसे ही बहुत सारे अन्य चित्रों के बारे में भी कहा जा सकता है। यहां मैं सुविस्तृत होने का प्रयास नहीं कर रही हूं।

एन.सी.ई.आर.टी. की लापरवाही का इससे और विचित्र नमूना क्या हो सकता है कि पृष्ठ 44 पर अंक पांच को प्रदर्शित करने के लिए बने चित्रों में दर्शाई गई ब्रुनेट (भूरे बालों वाली विदेशी स्त्री) और ब्लांड (पीले-सुनहरी बालों वाली स्त्री) महिलाओं के बालों के रंग भी नहीं बदले गए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि एन.सी.ई.आर.टी. यह जतलाना चाहती है कि हमारे आसपास स्थित सुपरिचित वस्तुएं, पुस्तकों में दर्शाए जाने योग्य नहीं हैं।

इन अमरीकी चित्रों की नकल करके एन.सी.ई.आर.टी. ने बच्चों की किताबों में किस तरह के चित्र होने चाहिए, इस संदर्भ में दिए गए दुनिया भर के शिक्षा शास्त्रियों के सुझावों की अनदेखी की है। दरअसल एन.सी.ई.आर.टी. से यह आशा थी कि अपने लोगों के अनुभवों के बारे में लिखते हुए उसने कम-से-कम दूसरी संस्कृतियों के प्रामाणिक चित्रण के संबंध में अमरीकी अनुशंसाओं का ही पालन किया होता।[4]

हमारी पाठ्यपुस्तकों में हमारे देश की विविधता को प्रस्तुत करने में हमेशा

पक्षपात देखा गया है। और इस संदर्भ में हमेशा व्यंग्यात्मक चित्रों का इस्तेमाल किया जाता है। मगर इस दृष्टि में यह पुस्तक कोई पक्षपात नहीं करती क्योंकि यह इसे इस्तेमाल करने वाले सभी बच्चों के लिए एक-समान रूप से पराई होगी!

यह समझना बहुत ही महत्वपूर्ण है कि पुस्तकों में चित्रांकन को कोई हाशिए की चीज़ समझकर नज़रअंदाज़ नहीं किया जाना चाहिए। इसके विपरीत इनकी भूमिका बहुत गहन और बुनियादी होती है। मुझे अभी भी उन सब बच्चों के चेहरे बहुत स्पष्ट रूप से याद आते हैं जब हम एक दिन उनकी कक्षा में नीम की एक टहनी ले गए और उनसे पत्तियों का चित्र बनाने को कहा। पूरा ही अनुभव अत्यंत रोमांचकारी था। कागज़ पर उस चीज़ को बनाना जो तब तक केवल एक बाहरी वस्तु थी या कागज़ पर उस चीज़ को पहचानना जो अब तक केवल आसपास देखी जाती थी, एक नए

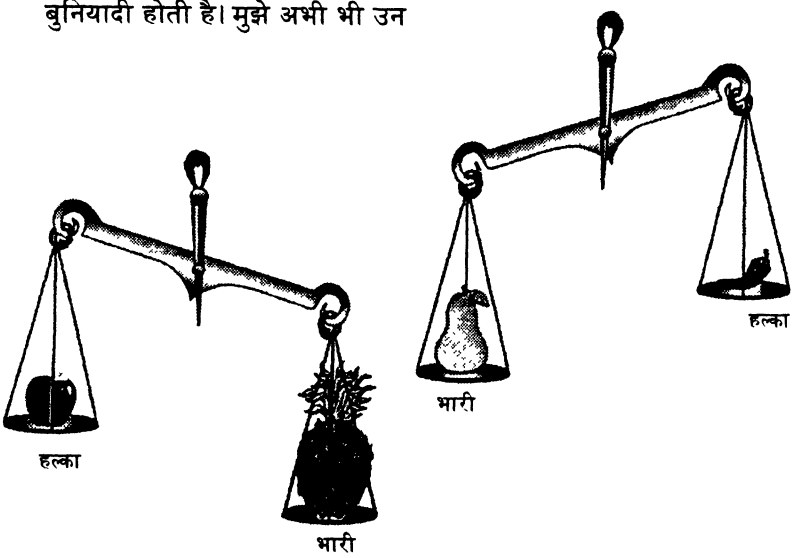

बच्चों को 'हल्के और भारी' की अवधारणा समझाने की कोशिश की जा रही है। तराजू के पलडे देख कर बच्चे शायद समझ जाएं कि कौन-सी चीज़ भारी है और कौन-सी हल्की। अवधारणा के स्तर पर शायद किसी को कोई आपत्ति है या नहीं, कहा नहीं जा सकता। लेकिन यहां जो तराजू दिखाए गए हैं वे उत्तरी अमरीका में बहुप्रचलित हैं, जिनमें कांटा नीचे की ओर होता है। भारत में ऐसे तराजू ढूंढने पर भी मिलना मुश्किल है।

आयाम को जन्म देता है। एक बार परिंदा उड़ना सीख जाए तो फिर अनजानी दुनिया में भी उड़ान भर सकता है। लेकिन ऐसे नए आयाम के शुरुआत में ही एकदम अजनबी चीज़ों की क्या भूमिका है?

तराजू भी उलटी

इन चित्रों के दूसरे गंभीर परिणामों की ओर मेरी युवा सहकर्मी रजनी ने मेरा ध्यान दिलाया। इसे पृष्ठ 147 पर दिए गए भारी व हल्की वस्तुओं को दर्शाने वाले चित्र में देखा जा सकता है। इसमें तराजुओं के कांटे नीचे की ओर दिखते हैं जो कि उत्तरी अमेरिका में एक सामान्य बात हो सकती है पर हमारे यहां नहीं। हमारे यहां सब्ज़ी की दुकानों में दिखने वाले साधारण तराजू से परिचित पांच साल का बच्चा इसे देखकर निश्चित रूप से चकरा जाएगा। हमारे यहां डंडी से लगा तराजू का कांटा, डंडी के ऊपर की ओर दाएं-बाएं हिलता है और अधिक भार की ओर झुक जाता है। एन.सी.ई.आर.टी. की पुरानी पुस्तकों में इसी किस्म के देशी तराजू के चित्र थे। इन चित्रों की तुलना कक्षा दो की पुरानी पुस्तकों के चित्रों से करने पर हमें बदलाव की दिशा तुरंत समझ में आ जाती है। आम, नारियल, कद्दू और तरबूज़ के साथ-साथ अपना जाना-पहचाना तराजू भी इस नई किताब से गायब है।

निश्चित रूप से पुरानी पुस्तकों के रेखाचित्रों में सटीकता और आकर्षण की दृष्टि से काफी कमियां थीं। अब रंगीन चित्रों के आ जाने से वह परिस्थिति बदल गई है, लेकिन शिक्षा शास्त्र के नज़रिए से इस नई परिस्थिति

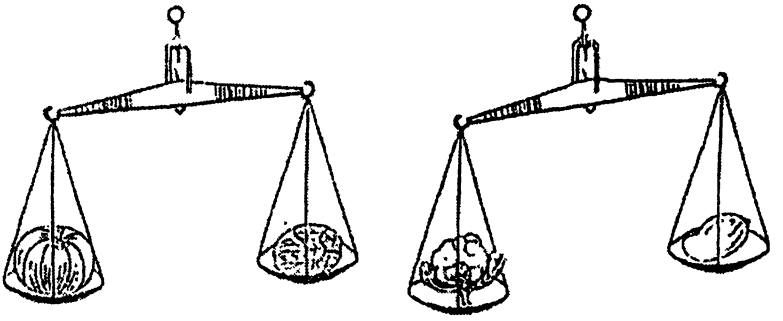

एन.सी.ई.आर.टी. कक्षा -2 के पुराने संस्करण (सन् 1988) में भारत में आमतौर पर प्रचलित तराजू का रेखाचित्र होता था। इस तराजू से पांच-छह साल का बच्चा भी परिचित होता है। लेकिन नई किताब में दिए तराजू भ्रम की स्थिति पैदा कर सकते हैं।

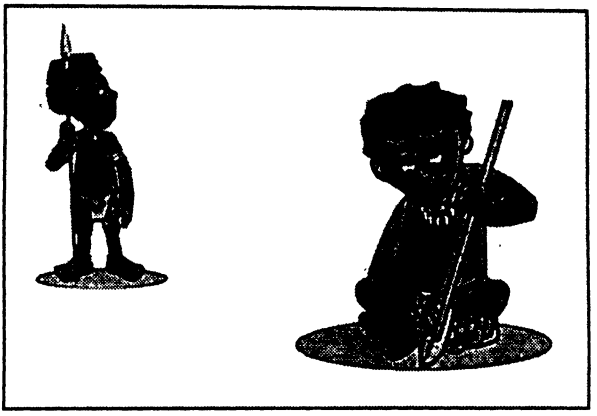

यहां बच्चों को 'दूर-पास' की अवधारणा से वाकिफ करवाया जा रहा है लेकिन चेहरे आफ्रिका के मूलनिवासियों के हैं। शायद अमरीकी किताबों की परम्परा को ही यहां आगे बढ़ाया गया है।

के काफी गंभीर परिणाम हो सकते हैं।

गैर ज़रूरी किफायत

हम आमतौर पर उन निजी पुस्तक प्रकाशकों की हमेशा आलोचना करते हैं जो बच्चों की पुस्तकों के चित्रांकन के लिए अन्य स्रोतों से चित्रों की नकल कर लेते हैं। किन्तु हम यह भी जानते हैं कि वास्तविक चित्रांकन काफी महंगा पड़ता है और इसलिए कई बार कारण समझ में आता है। लेकिन एन.सी.ई.आर.टी. के मामले में यह समझना मुश्किल है। निश्चित रूप से हमारा देश बच्चों के लिए अर्थपूर्ण पुस्तकें बनाने पर कुछ धन तो खर्च कर ही सकता है। लाखों बच्चों द्वारा उपयोग की जाने वाली पुस्तकों के लिए लागत में इस तरह की बचत करना तर्कसंगत नहीं है। यहां हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि चित्रांकन के प्रति ऐसा रवैया इस पुस्तक में इस्तेमाल की गई संरचनात्मक शैक्षणिक प्रक्रिया से उपजने वाली खामियों के अलावा है।

यह भी विचारणीय है कि एन.सी.ई.आर.टी. के निदेशक श्री जे. एस. राजपूत को इन चित्रों से कोई समस्या नहीं थी क्योंकि उन्होंने इस पुस्तक की प्रस्तावना लिखी है। यह पुस्तक वास्तव में संस्कृति की हमारी समझ पर कई बुनियादी सवाल उठाती है। दुर्भाग्यवश आज 'हमारी संस्कृति' वह अस्त्र बन गई है जिससे हम संकीर्ण निहित स्वार्थों के युद्ध लड़ते हैं। जबकि

हमारी वास्तविक संस्कृति कभी न खत्म होने वाला वह भंडार है जो शिक्षा-शास्त्रियों द्वारा इस्तेमाल किए जाने की प्रतीक्षा कर रहा है। इस रोज़मर्रा की संस्कृति में लोगों द्वारा आम खाना, पत्तों पर भोजन करना, और ऐसी ही अनेक छोटी-छोटी बातें भी समाहित हैं। इसमें शामिल है दिल्ली की ब्लू-लाइन बसों में टिकट के लिए पैसे आगे बढ़ाते जाना और लंबी दूरी की रेलयात्राओं में एक-दूसरे के साथ अपना भोजन बांटना। अपने लोगों के इस अनुभवजन्य यथार्थ से जुड़ना सीखकर हम सामूहिक हितों के नज़दीक कई मूल्यवान अर्थ खोज सकते हैं। ऐसा लगता है कि एन.सी.ई.आर.टी. ने शिक्षा की इस पहली मुख्य ज़िम्मेदारी को ही भुला दिया है।

टिप्पणियां :

1. एन.सी.ई.आर.टी. (2002) – वी.पी. गुप्ता और ईश्वर चन्द्र – आओ गणित सीखें, कक्षा एक की पहली पुस्तक। एन.सी.ई.आर.टी. फरवरी 2002 संस्करण।
2. इससे मेरा यह आशय कतई नहीं है कि बच्चों की कहानियां और चित्रों को संपूर्णतः किसी यथार्थवादी परंपरा का पालन करना चाहिए। हम सभी जानते हैं कि बच्चों को भूतप्रेतों की कहानियां अच्छी लगती हैं, पर भूतप्रेतों की सामाजिक उपस्थिति अत्यन्त वास्तविक होती है!
3. वास्तव में कोई यह भी कह सकता है कि ये चित्र हमारे समाज में सेब की महिमापूर्ण स्थिति को दर्शाते हैं, जो इसके तुलनात्मक पोषक मूल्य के अनुरूप कतई नहीं होती है।
4. उदाहरण के लिए टेंपल, मार्टिनेज़, योकोता और नेलर (1998) कहते हैं कि –"चित्रण को सटीक, प्रदर्शित काल के अनुरूप और सांस्कृतिक रूप से प्रामाणिक होना चाहिए। वे किसी सांस्कृतिक समुदाय को रुढ़िवादी या सजातीय तरीके से प्रस्तुत कर उनका उपहास न कर रहे हों। अलग-अलग समूहों की विभिन्नता प्रदर्शित करते हुए भी उनके शारीरिक लक्षणों को बढ़ा-चढ़ा कर नहीं दिखाना चाहिए। सांस्कृतिक छवियों के संप्रेषण में चित्रांकन का बहुत अधिक महत्व होता है, विशेष तौर पर चित्र कथाओं में।" सी. टेंपल, एम. मार्टिनेज़, जे. योकोता, और ए. नेलर; चिल्ड्रन्स बुक्स इन चिल्ड्रन्स हैंड्स – नीढम हाइट्स; एलिन और बेकन।

उषा मेनन: दिल्ली में स्थित नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ सायंस एंड टेक्नोलॉजी डिवेलपमेंट स्टडीज़ में कार्यरत हैं। साथ ही दिल्ली में 'जोड़ो-ज्ञान' संस्था के ज़रिए बच्चों के लिए शैक्षिक खिलौनों और गणित शिक्षण पर काम कर रही हैं।

हिन्दी अनुवाद: निशांत: शौकिया अनुवादक, भोपाल में रहते हैं।